International Journal of Sanskrit Research 2016; 2(5): 94-96

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2016; 2(5): 94-96
© 2016 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 22-07-2016
Accepted: 23-08-2016

डॉ. राजपाल
एसोसिएट प्रोफ़ेसर
सी आर किसान महाविद्यालय
जींद, हरियाणा

Correspondence
डॉ. राजपाल
एसोसिएट प्रोफ़ेसर
सी आर किसान महाविद्यालय
जींद, हरियाणा

योगदर्शन के अनुसार चित्त का स्वरूप

डॉ. राजपाल

भारतीय दर्शनों में योगदर्शन का स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि योगदर्शन का विषय सैद्धान्तिक होने की अपेक्षा व्यावहारिक अधिक है। जहाँ अन्य दर्शन, चाहे वे भारतीय हों अथवा पाश्चात्य पूर्ण रूप से विचारों एवं सिद्धान्तों की विवेचना मात्र हैं, वहीं योगदर्शन पूर्ण रूप से व्यावहारिक एवं क्रियात्मक है। योगदर्शन के प्रवर्तक महर्षि पतंजलि हैं। पतंजलि के अनुसार– 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'[1] अर्थात् चित्त की वृत्तियों का निरोध ही योग है। चित्तवृत्तिनिरोध में निरोध का अर्थ वृत्तियों का नाश नहीं बल्कि वृत्तियों का अपने अधिकरण चित्त में लय होना है। योगसूत्र भाष्यकार व्यास के अनुसार योग का अर्थ समाधि है तथा समाधि चित्त का सार्वभौम धर्म है।[2] विज्ञानभिक्षु के अनुसार यह वृत्तिनिरोध चित्त की अवस्था विशेष है।[3] यहाँ शंका उत्पन्न होती है कि यह 'चित्त' क्या है? जन सामान्य में 'चित्त' शब्द को व्यावहारिक रूप से 'मन' कहा जाता है। विद्वान् इसे अन्तःकरण कहते हैं, किन्तु योगदर्शन के लिए 'चित्त' शब्द के मूल अर्थ का बोध अत्यावश्यक है। पतंजलि एवं परवर्ती योग के आचार्यों द्वारा 'चित्त' शब्द के सम्पूर्ण अर्थ का वर्णन किया गया है। इस चित्त के स्वरूप को भली–भाँति जानकर ही योगदर्शन में कहे गए चित्तवृत्तिनिरोध का अर्थ उचित रूप से समझा जा सकता है।

चित्त का स्वरूप

योगसूत्र भाष्यकार व्यास के अनुसार पतंजलि द्वारा सांख्यदर्शन में उद्धृत मन, बुद्धि, अहंकार एवं अन्तःकरण के सामूहिक रूप को ही व्यावहारिक रूप में 'चित्त' शब्द द्वारा उद्बोधित किया गया है।[4] चित्त शब्द 'चित्ति संज्ञाने' धातु से क्त प्रत्यय करने पर निष्पन्न होता है, जिसका अर्थ है ज्ञान अथवा चेतना। व्यास के अनुसार चित्त प्रकाशशील, क्रियाशील तथा स्थैर्यशील होने के कारण त्रिगुणात्मक है।[5] वाचस्पतिमिश्र ने भी चित्त शब्द को बुद्धि अथवा अन्तःकरण के उपलक्षण के रूप में ग्रहण किया है।[6] व्यासभाष्य में सतोगुण, तमोगुण एवं रजोगुण इन त्रिगुणों को चित्त स्थिति अथवा वृत्ति कहा गया है। इन गुणों में विलीन चित्त क्रमशः ज्ञान, प्रवृत्ति एवं स्थिति वाला हो जाता है। अंतःकरण ही चित्त संज्ञक है ऐसा विज्ञानभिक्षु का मत है। वृत्ति भेद से यह अन्तःकरण चार प्रकार का है।[7] न्यायदर्शन में नवद्रव्यों के अन्तर्गत 'चित्त' के अर्थ में 'मन' शब्द का प्रयोग किया गया है। वेदान्तशास्त्र में भी, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार इन चार प्रकार के अन्तःकरण सामान्य को चित्त कहा गया है।[8] इसी प्रकार आधुनिक मनीषी डॉ. पी.के. गुप्ता मन, बुद्धि एवं अहंकार इन तीनों को अन्तःकरण मानकर इसे चित्त संज्ञा देते हैं।[9] डॉ. सम्पूर्णानन्द के अनुसार 'चित्त' शब्द का अर्थ ज्ञान, इच्छा एवं संकल्प है।[10] डॉ. योगेन्द्र पुरुषार्थी के अनुसार चित्त पर पड़े संस्कारों के आधार पर ही प्राचीन अनुभवों का स्मरण होता है। स्मरण करने की अवस्था में यह 'चित्त' मस्तिष्क में फैले हुए ज्ञान तन्तुओं को उपयोग में लाता है।[11] नारायणतीर्थ भी अन्तःकरण के तीनों भेदों को 'चित्त' संज्ञक मानते हैं।[12]

इस प्रकार विभिन्न दर्शनों में मन, बुद्धि एवं अहंकार को अन्तःकरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जिसे व्यवहारिक रूप में चित्त कहा गया है। तीनों गुणों के समावेश के अतिरिक्त चित्त को सत्वप्रधान माना गया है। गुणों की सक्रियता के कारण चित्त भिन्न–भिन्न अवस्थाओं वाला होता है। वाचस्पतिमिश्र द्वारा चित्त की सत्त्वगुणबहुलता को 'चित्तसत्त्व' नाम दिया गया है।[13] प्रख्या अथवा प्रकाश या ज्ञान सत्त्वगुण का लक्षण है। अतः चित्त को प्रख्यारूप अर्थात् प्रकाश रूप कहा गया है।

चित्तभूमि

चित्त की भिन्न–भिन्न अवस्थाएँ ही चित्तभूमियाँ कही जाती हैं। योगसूत्र–भाष्यकार– व्यास के अनुसार चित्त की क्षिप्त, मूढ, विक्षिप्त, एकाग्र एवं निरुद्ध ये पाँच भूमियाँ हैं।[14] भोजदेव ने भी इन पाँच चित्तभूमियों का ही वर्णन किया है।[15] उनके मतानुसार ये भूमियाँ चित्त की विशेष अवस्थाएँ हैं।[16] इनका संक्षिप्त परिचय निम्नानुसार है–

1. क्षिप्तः भाष्यकार व्यास के अनुसार चित्त की अत्यन्त चंचल अवस्था, जिसमें रजोगुण की प्रधानता तथा सतो एवं तमोगुण की गौण अवस्था रहती है, वही चित्त की क्षिप्त भूमि कहलाती है। इनके मत में रजोगुण क्रियाशील स्वभाव वाला होता है।[17] भोजदेव के कथनानुसार चंचल स्वभाव वाले रजोगुण के सम्बन्ध के कारण इस 'क्षिप्त' भूमि की अवस्था विशेष में चित्त भी चंचल होता है तथा इस भूमि में रजोगुण के द्वारा बाह्य विषयों में चित्तवृत्ति प्रेरित होती है। इस विषय में वृत्तिकार भोजदेव उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। वह क्षिप्त भूमि सदा ही दैत्य, दानव इत्यादि रजोगुण की अधिकता वाले प्राणियों की होती है।[18] आचार्य विज्ञानभिक्षु के अनुसार 'क्षिप्त' भूमि रजोगुण प्रधान है। रजोगुण के उद्रेक के कारण विषयों में ही व्याप्त रहने वाली चित्त की अवस्था क्षिप्त भूमि है।[19] इस प्रकार व्यास तथा अन्य योगदर्शन के विद्वानों ने 'क्षिप्त' भूमि को चित्त की चंचल अवस्था विशेष वाली भूमि स्वीकार किया है।

2. मूढः चित्त की इस अवस्था विशेष में रजोगुण की मात्रा दब जाने तथा तमस् के उद्रेक हो जाने पर अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य तथा अनैश्वर्य की ओर जाने की प्रवृत्ति होती है। यह दशा वाचस्पति मिश्र के अनुसार 'क्षिप्त' एवं 'मूढ' दोनों भूमियों की समवेत रूप से बताई गई है।[20] भोजदेव के अनुसार 'मूढ' नामक चित्त भूमि में तमोगुण की अधिकता के कारण कर्त्तव्य एवं अकर्तव्य का ज्ञान न होने से क्रोध–मोह–लोभ–द्वेष–राग इत्यादि भावनाओं के कारण अशुभ कार्यों में ही प्रवृत्ति होती है।[21] विज्ञानभिक्षु के अनुसार तमस् के अनुवेध में 'मूढ़' भूमि ही संगत है, 'क्षिप्त' भूमि नहीं। 'मूढ' अवस्था में तमोगुण की अधिकता के कारण चित्त निद्रा आदि वृत्तियों से युक्त रहता है।[22] इस प्रकार चित्त की यह 'मूढ' भूमि तमोगुण बहुलता वाली चित्त की अवस्था विशेष है।

3. विक्षिप्तः विज्ञानभिक्षु के अनुसार सत्त्वगुण प्रधान यह भूमि क्षिप्तादि भूमि से कुछ उत्तम भूमि है। इस अवस्था विशेष में किञ्चित् काल पर्यन्त समाधि लगने पर भी मध्य–मध्य में रजोगुण की अधिकता होने के कारण 'चित्त' अन्य विषयों की ओर अग्रसित होता है। अतः क्षिप्त चित्त का वैशिष्ट्य ही विक्षिप्त है, जिसमें सत्त्वगुण की अधिकता होने पर 'चित्त' अस्थिर होता है।[23] भोजराज के अनुसार चित्त की यह विक्षिप्त भूमि तो सतोगुण की अधिकता के कारण विशेषरूप से दुःख के साधनों को दूर करके शब्द–स्पर्श–रूप–रस–गन्ध आदि सुख प्रदान करने वाले विषयों की ओर ही प्रवृत्ति कराती है।[24] वाचस्पतिमिश्र के अनुसार 'एकाग्र' भूमि की प्रारम्भिक अवस्था विशेष ही विक्षिप्त भूमि है, जिसमें रजोगुण की किञ्चित् मात्रा अर्थात् लेश से अथवा कदाचित् स्फुरण से अनुविद्ध अथवा आक्रान्त होकर चित्त धर्म, ज्ञान, वैराग्य एवं ऐश्वर्य की ओर उन्मुख होता है। वही चित्त जब उस रजोगुण के लेश मात्र से भी रहित हो जाता है, तो अपने सत्त्वात्मक स्वरूप में प्रतिष्ठित होता है।[25]

4. एकाग्रः चित्त की एकाग्र अवस्था को सम्प्रज्ञात योग के नाम से भी जाना जाता है। योगसूत्र भाष्यकार व्यास के अनुसार चित्त की एकाग्र भूमि में लगने वाली समाधि स्थिरता की अवस्था में वस्तुसत् ध्येय पदार्थ को पूर्ण रूप से प्रकाशित करती है।[26] चित्त की इस निरुद्धावस्था में योगी सत्त्व नामक गुण से भी अन्ततः विरक्त हो जाता है। इसी कारण विवेकज्ञान का भी निरोध करता है, जिसे असम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं। भोजदेव के मतानुसार चित्त की इस एकाग्र संज्ञक भूमि में बाह्य वृत्तियों का निरोध होता है।[27] इस प्रकार चित्त की यह एकाग्र भूमि संज्ञक अवस्था ध्येय वस्तु का पूर्ण साक्षात्कार कराती है।

5. निरुद्धः व्यास द्वारा चित्त की निरुद्धावस्था में होने वाले विवेकख्याति रूप सात्त्विक वृत्ति के निरोध को ही असम्प्रज्ञात योग कहा गया है।[28] व्यास के अनुसार चित्त की प्रथम क्षिप्त, मूढ एवं विक्षिप्त ये तीन भूमियाँ योग के लिए उपयोगी नहीं हैं तथा अन्तिम एकाग्र एवं निरुद्ध ये दो भूमियाँ योग हेतु वस्तुतः उपयुक्त हैं।[29] चित्त की एकाग्र भूमि में केवल राजस एवं तामस वृत्तियों का निरोध होता है तथा सात्त्विक वृत्ति का पूर्ण उदय रहता है। इसके पश्चात् होने वाली निरुद्ध भूमि में सात्त्विक वृत्ति का भी निरोध हो जाता है। इसी कारण इसे निरुद्ध भूमि कहा जाता है। अतः सत्त्वगुण की क्रमशः प्रबलता होने के कारण भोजदेव एकाग्र तथा निरुद्ध दोनों भूमियों को समाधि में उपयोगी मानते हैं।[30] 'एकाग्र' एवं निरुद्ध ये अन्तिम दोनों ही भूमियाँ योगशास्त्र का लक्ष्य हैं किन्तु इन दोनों में भी मुख्यरूप से निरुद्धावस्था को ही सूत्रकार पतंजलि द्वारा योग संज्ञा दी गई है।

चित्त की वृत्तियाँ

मनुष्य का चित्त जिन अवस्थाओं में अथवा जिन–जिन परिस्थितियों में रहता है वही चित्त की वृत्तियाँ कहलाती हैं। चित्त की वृत्तियाँ असंख्य हैं फिर भी भेद की दृष्टि से इन्हें दो भेदों में रखा गया है। क्लिष्ट तथा अक्लिष्ट। क्लिष्ट अर्थात् कष्ट, पीड़ा, दुःख अथवा बाधा अर्थात् क्लेश वाली एवं क्लेश रहित। योगसूत्र–भाष्यकार–व्यास के अनुसार क्लेश नामक बाधाओं से अभिभूत रहने वाली वृत्तियाँ क्लिष्ट कहलाती हैं और ये वृत्तियाँ कर्माशयों को उत्पन्न करती हैं।[31] जो वृत्तियाँ विवेक ख्याति विषयक गुणों के कार्य की विरोधिनी हों, वे अक्लिष्ट वृत्तियाँ कहलाती हैं।[32] क्लिष्टाक्लिष्ट संस्कार वृत्तियों से उत्पन्न होते हैं एवं उन संस्कारों से फिर वैसी ही वृत्तियाँ उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार वृत्ति एवं संस्कार का यह चक्र चित्त में सदैव चलता रहता है।[33] सूत्रकार ने क्लिष्टाक्लिष्ट वृत्तियों को पाँच प्रकार की स्वीकार की है।[34] – प्रमाण, विपर्यय, विकल्प, निद्रा एवं स्मृति।[35] चित्त की समस्त प्रकार की वृत्तियाँ इन पाँच वृत्तियों में ही समाहित हैं, ऐसा वाचस्पति मिश्र का मत है।[36]

इस प्रकार पूर्वोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि मन, बुद्धि, अहंकार एवं अन्तःकरण के मिश्रित रूप को ही व्यवहार में चित्त कहा जाता है। यह चित्त त्रिगुणात्मक वृत्ति वाला होते हुए भी सत्त्व गुण की प्रधानता वाला होता है। सत्त्व, रज एवं तम इन तीन गुणों के कारण ही चित्त की भिन्न–भिन्न अवस्थाओं का अनुभव प्राणी मात्र द्वारा किया जाता है। वस्तुतः चित्त भूमियाँ तथा वृत्तियाँ, चित्त की अवस्थाएँ ही हैं। चित्त की वृत्तियों, भूमियों एवं चित्त के स्वरूप को भली भाँति जानकर ही योगसाधना के मार्ग पर आगे बढ़ा जा सकता है। क्योंकि सम्पूर्ण योगदर्शन में वर्णित विभिन्न क्रियात्मक उपाय, इस चित्त के वृत्तिनिरोध के लिए ही कहे गए हैं। चित्त के स्वरूप को जानकर ही हमें यह ज्ञात होता है कि चित्तवृत्ति निरोध का अर्थ चित्त की वृत्तियों को नष्ट करना नहीं, अपितु पुनः पुनः अभ्यास के द्वारा चित्त की विभिन्न अवस्थाओं में उन्हें नियन्त्रित करके समाधि की अवस्था को प्राप्त करना है।

सन्दर्भ सूची

1. योगसूत्र, 1.2. 'योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः'।
2. व्यासभाष्य, पृ.1
3. योगवार्तिक, पृ. 10. 'वृत्ति निरोधश्च चित्तस्य वृत्तिसंस्कारशेषावस्था'
4. सांख्यकारिका, 33 'अन्तःकरणं त्रिविधं दशधा बाह्यं त्रयस्य विषयाख्यम्'।
5. व्यासभाष्य, पृ.9. 'चित्तं हि प्रख्याप्रवृत्ति स्थितिशीलत्वात् त्रिगुणम्'।
6. तत्त्ववैशारदी, पृ.7. 'चित्तशब्देनान्तः करणं बुद्धिमुपलक्ष्यति'।
7. योगवार्तिक, पृ. 12. 'चित्तमन्तः करण सामान्यम् ..... विभागात्'।
8. वेदान्त परिभाषा, पृ. 90
9. पातंजलयोगसूत्रम् (एक समालोचनात्मक अध्ययन), पृ. 64.
10. योगदर्शन, पृ. 75.

11. वेदों में योगविज्ञान, पृ. 108.
12. योगसिद्धान्तचन्द्रिका, पृ. 3.
13. तत्त्ववैशारदी, पृ. 13. 'चित्तरूपेण परिणतं सत्त्वं चित्तसत्त्वम्, तदेवं प्रख्यारूपतया सत्त्वप्राधान्यं चित्तस्य दर्शितम्'।
14. व्यासभाष्य, पृ.1 क्षिप्तं मूढ़ विक्षिप्तमेकाग्रं निरुद्धमिति चितस्थ भूमयः।
15. भोजवृत्ति, पृ. 2.
16. वही, पृ. 8. 'चित्तस्यभूमयः चित्तस्यावस्थाविशेषः'।
17. व्यासभाष्य, पृ. 190. 'क्रियाशीलं रजः'।
18. भोजवृत्ति, पृ. 8. 'तत्रक्षिप्तं रजसे उद्रेकास्थिरं बहिर्मुखतया सुखदुःखादिविषयेषु– विकलियतेषु व्यवहितेषु वा रजसा प्रेरितं वच्च सदैव देवदानवादीनाम्'।
19. योगवार्त्तिक, पृ. 6. 'क्षिप्तं रजसाविषयेष्वेव वृत्तिमत्'।
20. तत्त्ववैशारदी, पृ. 13. 'क्षिप्तं चित्तं दर्शयन् मूढमपि सूचयति'।
21. भोजवृत्ति, पृ. 8. 'मूढं तमस उद्रेकात् कृत्याकृत्यविभागमन्तरेण क्रोधादिभिः विरूद्ध कृत्येष्वेव नियमित। तच्च सदैव रक्षः पिशाचादीनाम्'।
22. योगवार्तिक, पृ. 6. 'मूढं तमसा निद्राऽऽदिवृत्तिमत्'।
23. वही, 'क्षिप्ताद्विशिष्टं विक्षिप्तं सत्वाधिक्येन समादधपि चित्तं रजोमात्रयाऽन्तरान्तराविषयान्तरवृत्तिमद्'।
24. भोजवृत्ति, पृ. 8. 'विक्षिप्तं तु सत्वोद्रेकात् वैशिष्टयेन परिहृत्य दुःख साधनं सुखसाधनेष्वेवशब्दादिषु प्रवृत्तम्'।
25. तत्त्ववैशारदी, पृ. 13.
26. व्यासभाष्य, पृ.1 (योगसूत्र1.1.) 'ऐकाग्रे चेतसि सद्भूतमर्थम् प्रद्योतयति'।
27. भोजवृत्ति, पृ. 9. 'ऐकाग्रेबहिर्वृत्तिनिरोधः'।
28. व्यासभाष्य, पृ. 1 (योगसूत्र1.1.) 'सर्ववृत्तिनिरोधत्वसम्प्रज्ञातः समाधिः'।
29. वही, पृ. 1
30. भोजवृत्ति, पृ. 9. 'एकाग्रनिरूद्धरूपे द्वे च सत्त्वोत्कर्षाद् यथोत्तरमवस्थित्वात् समाधावुपयोगंभजेते'।
31. व्यासभाष्य, पृ. 25. (योगसूत्र 1.5) 'क्लेशहेतुकाः कर्माशयप्रचयक्षेत्रीभूताः क्लिष्टाः'।
32. वही, पृ. 25
33. वही, पृ. 25. (योगसूत्र 1.5) 'एवं वृत्तिसंस्कारचक्रमनिशमावर्तते'।
34. योगसूत्र 1.5 'वृत्तयः पञ्चतय्यः क्लिष्टाऽक्लिष्टाः'।
35. योगसूत्र 1.6 'प्रमाणविपर्ययविकल्पनिद्रास्मृतयः'।
36. तत्त्ववैशारदी, पृ. 27. 'एतावत्य एव वृत्तयो नापराः .... भवति'।